<u>उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय नैनीताल</u>

<u>द्वितीय अपील संख्या 76 वर्ष 2022</u>

घनश्याम सिंह एवं अन्य.....अपीलार्थी/प्रतिवादी

बनाम

नरेन्द्र सिंह.....वादी/ विपक्षी

अधिवक्ता– श्री राजेश पाण्डेय, अधिवक्ता.....अपीलार्थी की ओर से

श्री एस.के. मण्डल, अधिवक्ता.....विपक्षी की ओर से

<u>माननीय शरद कुमार शर्मा, जे.</u>

प्रतिवादी की यह दूसरी अपील है, जिसमे उसने तृतीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, रूद्रपुर, ऊधम सिंह नगर द्वारा सिविल अपील संख्या **40 वर्ष 2018, घनश्याम सिंह एवं अन्य बनाम नरेन्द्र सिंह,** मे पारित निर्णय दिनांकित 11 अप्रैल 2018 व परिणामी डिक्री दिनांकित 18 अप्रैल 2022 तथा सिविल जज, (जू0डि0) रूद्रपुर, ऊधम सिंह नगर द्वारा **सिविल वाद संख्या 85 वर्ष 2007, श्री नरेन्द्र सिंह बनाम घनश्याम सिंह एवं अन्य,** मे पारित निर्णय दिनांकित निर्णय एवं डिक्री दिनांकित 2 मई, 2018 को चुनौती दिया है।

2. एक बहुत ही विशेष स्थिति जिस पर वर्तमान द्वितीय अपील मे विचार किया गया है वह यह है कि वादी (यहां प्रतिवादी) ने जब दिनांक 24 मई 2007 को सम्पत्ति के सम्बन्ध मे वाद दायर किया था तो उसके पैरा संख्या 1, 2 व 3 मे विवादित सम्पत्ति का वर्णन किया था, जिसमे उसने प्रतिवादीगण के विरूद्ध अपने चाहे गये अनुतोष को निम्न प्रकार विरचित किया थाः–

''(अ). यह कि डिक्री बहक वादी खिलाफ प्रतिवादीगण इस आशय की सादिर फरमा दी जाये कि प्रतिवादीगण व उनके वारिसान तथा नौकर चाकर ऐजेन्ट्स वादी की उपरोक्त भूमि जिसका विवरण वादपत्र के पद संख्या 1, 2 व 3 व संलग्न नक्शा नजरी नक्शा मे दिया गया है, मे किसी प्रकार का बेमागदाखलत करने, व किता प्रकार का नया निर्माण कच्चा व पक्का करने से व विवादित भूमि की मूल प्रकृति को बदलने से हमेशा–हमेशा के लिये बाज रहें।

''अ.अ.'' यह कि प्रतिवादीगण को विवादित भूखण्ड से बेदखल कर उसका कब्जा वादी को दिलाये जाने हेतु निषेधाज्ञा का आदेश पारित कर विवादित भूखण्ड से प्रतिवादीगण से वादी को लाइसेन्स की अवधि समाप्त होने की तिथि से वास्तविक कब्जा दिलाये जाने की

तिथि तक 3050/रूपये प्रतिमाह की दर से हर्जा इस्तेमाल बेजा भी दिलाये जाने का आदेश पारित करने की कृपा करें।

(ब) यह कि अन्य अनुतोष जो न्यायालय श्रीमान उचित समझे वादी को प्रतिवादीगण से दिलाया जाये।

(स) यह कि खर्चा मुकदमा वादी को प्रतिवादीगण से दिलाया जाये।''

3. जिस प्रकार के डिक्री की प्रार्थना वादी द्वारा वाद मे की गयी थी वह वाद मे स्थायी व्यादेश की डिक्री जारी करने सम्बन्धी डिक्री की प्रार्थना होगी, जिसमे यह प्रार्थना की गयी, कि सम्पत्ति की प्रकृति मे कोई परिवर्तन न किया जाये तथा वादी को प्रतिवादी से सम्पत्ति का रिक्त अध्यासन प्रदान कराया जाये। इसके अतिरिक्त, पट्टे की अवधि की समाप्ति के पश्चात प्रतिवादीगण से रूपये 3050 प्रतिमाह दिलाये जाने की प्रार्थना भी की गयी थी।

4. चाहे गये अनुतोष की प्रकृति से यह निष्कर्ष निकलता है कि वास्तव मे यह स्थायी व्यादेश की डिक्री के लिये प्रार्थना थी जिसमे वादी द्वारा इस आशय के आज्ञापक व्यादेश की भी प्रार्थना की गयी थी कि प्रतिवादीगण को आदेशित किया जाये कि वह वादी को वाद पत्र के पैरा 1, 2, व 3 मे वर्णित सम्पत्ति, जिसका नक्शा संलग्न वाद पत्र मे संलग्न था, परन्तु दुर्भाग्य से वह इस द्वितीय अपील का भाग नही है, से बेदखल न करें।

5. मुकदमा चला; प्रतिवादीगण को नोटिस जारी किये गये एवं प्रतिवादीगण ने वादपत्र के अभिकथनो से इंकार करते हुए प्रतिदावे के माध्यम से यह भी अनुतोष मांगा कि उनके पक्ष मे तथा वादी के विरूद्ध इस आशय की स्थायी व्यादेश की डिक्री जारी कर दी जाये कि वे प्रतिवादीगण को बिना विधिक प्रक्रिया अपनाये सम्पत्ति बेदखल न करें तथा उनके शान्तिपूर्ण कब्जे मे हस्तक्षेप न करें।

6. ऐसा प्रतीत होता है कि वाद एवं प्रतिदावे मे सम्पत्ति के सम्बन्ध मे जिस प्रकार के अनुतोष की प्रार्थना की गयी थी वह एक ही सम्पत्ति के सम्बन्ध मे थी, जिसका वर्णन वाद पत्र और लिखित कथन मे, तथा विशिष्ट रूप से प्रतिदावे के पैरा संख्या 20 व 21 मे किया गया था, जो कि भूमि खाता खतौनी संख्या 119 खेत संख्या 217 (क), क्षेत्रफल 0.0700 हेक्टेयर था, जिस पर प्रतिवादीगण/अपीलार्थी 30 वर्षों से अधिक समय से अपना कब्जा होने का दावा कर रहे थे।

7. विद्वान विचारण मे कार्यवाही प्रारम्भ हुयी एवं अभिवचनों के आदान–प्रदान के पश्चात् विद्वान न्यायालय द्वारा दिनांक 19 नवम्बर 2010 को निम्नलिखित वाद विन्दु

विरचित किये गये, जैसा कि विचारण न्यायालय के आक्षेपित निर्णय के पैरा संख्या 06 मे वर्णित है, तथा जो निम्न प्रकार हैः–

''(1) क्या वादी विवादित भूमि का भूमिधर काबिज काश्तकार हैं? यदि हॉ तो प्रभाव।

(2) क्या वादी खाता संख्या 199 खेत संख्या 217क रकबा 0.0700 है0 भूमि पर क्रयशुदा काबिज है? यदि हां तो प्रभाव।

(3) क्या वाद अल्पमूल्यांकित है?

(4) क्या प्रदत्त न्यायशुल्क कम है?

(5) क्या वाद मे पक्षकारों के असंयोजन का दोष विद्यमान है?

(6) क्या वर्तमान वाद के श्रवण की अधिकारिता इस न्यायालय को प्राप्त है?

(7) क्या काउन्टर क्लेम प्रतिवादी सं0–01 गांव की आबादी के अन्तर्गत खसरा संख्या 223क रकबई 0.3630 है0 भूमि मध्ये प्रतिवादी संख्या 01 व 3 मकान बना है, जिसमे प्रतिवादी संख्या 1व 3 अपने स्वर्गीय पिता के जीवन काल से काबिज चले आ रहे हैं?

(8) क्या प्रतिवादीगण/काउन्टर क्लेम द्वारा विवादित भूमि पर 30 वर्षो से अधिक समय से काबिज चले आ रहे हैं? यदि हॉ तो प्रभाव।

(9) क्या प्रतिवादी के द्वारा काउन्टर क्लेम का मूल्यांकन कम किया गया है?

(10) क्या वादी के द्वारा काउन्टर क्लेम का कम न्यायशुल्क अदा किया गया है?

(11) क्या वादी वादपत्र मे याचित अनुतोष पाने का अधिकारी है?

(12) क्या प्रतिवादी काउन्टर क्लेम मे याचित अनुतोष को पाने का अधिकारी है?''

8. तत्पश्चात् पक्षकारों के अनुरोध पर वाद संख्या 85 वर्ष 2007 मे दिनांक 24 मई, 2015 को अतिरिक्त वाद विन्दु विरचित किये गये जो कि निर्णय के पैरा संख्या 7 मे निम्न प्रकार वर्णित हैः–

(13) क्या वादी द्वारा याचित क्षतिपूर्ति का अनुतोष काल बाधित है?

(14) क्या वादी द्वारा संशोधन के माध्यमसे जोड़े गये अनुतोष पर न्यायशुल्क देय है, जिसे वादी ने अदा नहीं किया है?''

9. कार्यवाही के पक्षकारो ने अपने–अपने साक्ष्य प्रस्तुत किये। वादी ने स्वयं को पी0डब्लू–01 के रूप मे साक्षी के रूप मे प्रस्तुत करने के अलावा अपने मुख्य परीक्षा साक्ष्य का एक शपथपत्र भी दाखिल किया जो कागज संख्या 202 (क) है। साथ ही उसने एक स्वतंत्र साक्षी पी0डब्लू–02 भूपेन्द्र चौधरी तथा पी0डब्लू0––03श्री धर्मेन्द्र नैनवाल का साक्ष्य जो कि कागज संख्या 105 (क) जिन्होने अपने कथन को शपथपत्र के माध्यम से भी समर्थित किया जो कि कागज संख्या 206 (क) है।

10. वादी ने विक्रय विलेख की मूल प्रति कागज संख्या 175 (क) को पत्रावली पर दाखिल किया जिसके आधार पर उसके तर्क दिया कि वह विवादित सम्पत्ति का अनन्य स्वामी होगा, जिस पर कि प्रतिवादीगण/अपीलार्थी अपना कब्जा पिछले 30 वर्षो से बताते हुए वादी/विपक्षी को बिना कानूनी प्रक्रिया अपनाये उनके कब्जे मे दखल देने से रोकना चाहते थे।

11. वादी/विपक्षीगण द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के प्रत्युत्तर मे प्रतिवादीगण/अपीलार्थीगण द्वारा भी अपने मौखिक साक्ष्य मे डी0डब्लू0–01 घनश्याम सिंह व डी0डब्लू–02 रंजीत सिंह के साक्ष्य प्रस्तुत किये गये तथा अपने समर्थन मे साक्ष्य शपथपत्र भी दाखिल किये गये। परन्तु जहां तक भूमि के स्वामित्व के सम्बन्ध मे प्रश्न है, प्रतिवादीगण/अपीलार्थीगण की ओर से दाखिल दस्तावेजो जो कि कागज संख्या 77 (ग) सूचीपत्र के माध्यम से दाखिल किये गये थे से एक मात्र दस्तावेज जो पत्रावली पर दाखिल किया गया वह खसरा दिनांकित 29 मई, 2007 कागज संख्या 79 (ग), मीटर सीलिंग प्रमाणपत्र, बिजली बिल, जारी नोटिस आदि जो भी दस्तावेज थे, वे यह दर्शित करते थे कि प्रतिवादीगण विवादित सम्पत्ति के कब्जे मे थे। वादपत्र के पैरा 11 मे वर्णित कोई दस्तावेज यह दर्शित नहीं करता है कि प्रतिवादीगण/अपीलार्थीगण कभी भी विवादित सम्पत्ति के दस्तावेजी स्वामी थे, जिससे उन्हे उनके प्रतिदावे मे चाहे गये अनुतोष का हकदार बना सकता था या वादी/विपक्षीगण द्वारा अपने वादपत्र मे चाहे गये अनुतोष के विरूद्ध हो सकता हो। क्यूंकि उनके कब्जे की प्रास्थिति खतौनी दिनांकित 29 मई, 2007 के आधार पर होने की होगी।

12. जैसी भी स्थिति हो, वाद चला और विद्वान विचारण न्यायालय ने एक समग्र निर्णय दिनांकित 2 मई, 2018 द्वारा एक डिक्री प्रदान की, जिसे उद्धृत किया जाता हैः–

''आदेश

40. वादी का वाद प्रतिवादीगण के विरूद्ध वास्ते बेदखली तथा हर्जा इस्तेमाली सव्यय **आज्ञप्त** किया जाता है।

प्रतिवादी संख्या 01 का काउन्टर क्लेम वास्ते स्थायी निषेधाज्ञा खारिज किया जाता है।

प्रतिवादीगण को आदेशित किया जाता है कि वादग्रस्त सम्पत्ति खाता संख्या 119 खेत नम्बर 217 रकबा 0.0700 है0 का अध्यासन निर्णय की तिथि से 30 दिन के अन्दर वादी को प्रदान किया जाना सुनिश्चित करें तथा दिनांक 01.04.2007 से वादग्रस्त सम्पत्ति का कब्जा प्रदान करने की तिथि तक 50/रूपये प्रतिमाह की दर से हर्जा इस्तेमाली अदा करना सुनिश्चित करें।''

13. यद्यपि यह वादपत्र एवं प्रतिदावे के सम्बन्ध मे एक समग्र निर्णय है, परन्तु वादी/विपक्षी का दावा डिक्री कर दिया गया तथा प्रतिवादीगणी/अपीलार्थी का स्थायी व्यादेश की डिक्री जारी करने सम्बन्धी प्रतिदावा निरस्त कर दिया गया। यह दो स्वतंत्र कार्यवाहियों, धारा 9 सिविल प्रकिया संहिता के अन्तर्गत वादपत्र व आदेश 8 नियम 6–क के अन्तर्गत प्रतिदावे, जिसे आदेश 8 नियम 6–क (4) के अनुसार पृथक दावा माना जाता है, के सम्बन्ध मे एक ही समग्र निर्णय था। क्यूंकि आदेश 8 नियम 6–क (4) यह प्रावधानित करता है कि प्रतिदावे को एक पृथक वाद के रूप मे व्यवहृत किया जायेगा तथा वह वादपत्र के सम्बन्ध मे प्रकियात्यक नियमो से शासित होगा।

14. इसका तात्पर्य यह है कि प्रतिदावे के अन्तर्गत दावा किये गये अधिकारो के निर्धारण की विधि बिल्कुल वही होगी जो दावे के लिये होती है, जिसके परिणामस्वरूप इस न्यायालय का यह अभिमत है कि जब प्रतिदावा को एक स्वतंत्र वाद के रूप मे माना जाता है तो कोई भी निर्णय जो उसके सम्बन्ध मे पारित किया जाता है, यद्यपि वह एक समग्र निर्णय के माध्यम से दिया गया हो, उसे पृथक निर्णय के रूप मे माना जायेगा तथा उसे दो वादों के सम्बन्ध मे डिक्री माना जायेगा, एक धारा 9 सिविल प्रकिया संहिता के अन्तर्गत तथा दूसरी प्रतिदावे के रूप मे आदेश 9 नियम 6–क के अन्तर्गत। सी0पी0सी0 के आदेश 8 नियम 6–क जैसे ही 1976 के अधिनियम संख्या 104 द्वारा संशोधन की धारा 58 के प्रभाव के रूप मे दिनांक 1 फरवरी, 1977, जिसके द्वारा आदेश 8 नियम 6क को पहली बार सिविल प्रकिया संहिता मे डाला गया था, इस न्यायालय का विचार है कि केवल इस तथ्य के कारण कि विचारण न्यायालय ने सुविधा की दृष्टि से दावे व प्रतिदावे के सम्बन्ध मे एक समग्र निर्णय किया है, इसलिये हस्तक्षेप योग्य नहीं है कि उसके सम्बन्ध मे एक ही डिक्री पारित की गयी है, जिसके सम्बन्ध मे एक अपील हो सकती हो, विचारण न्यायालय ने निर्णय दिनांकित 2 मई 2018 दो भिन्न प्रकृति की डिक्री पारित की है जो न्यायिक प्रवर्तन मे एक दूसरे से भिन्न हैं, इसे भिन्न दावों के सम्बन्ध मे अपील के उद्देश्य से एक की डिक्री नहीं माना जा सकता है, 2 मई, 2018 के निर्णय के विरूद्ध एक अपील के प्राथमिकता देने के लिये सामान्य डिक्री नहीं माना जा सकता है, निर्णय दिनांकित 2 मई, 2018 द्वारा पक्षकारों के भिन्न–भिन्न अधिकारों का निर्धारण करते हुये दो स्वतंत्र डिक्री प्रदान की गयी।

15. इसलिये, इस न्यायालय का यह मत है कि दिनांक 2 मई 2018 को जो डिक्री पारित की गयी उसकी प्रकृति दो भिन्न वादों के सम्बन्ध मे है, जो प्रतिवादीगण/अपीलार्थी के विरूद्ध निर्णीत की गयी थी, जिस कारण सिविल अपील संख्या 40 वर्ष 2018 जो

प्रस्तुत की गयी वह दिनांक 28 मई 2018 के निर्णय तक सीमित थी, परन्तु अपील के ज्ञापन मे, यदि विचार किया जाये तो, मुख्य अनुतोष जो अपीलकर्ता द्वारा चाहा गया था उसमे उसने वादी के दावे को स्वीकार करने तथा प्रतिवादी के दावे को निरस्त करने को चुनौती दिया था, जो कि अपनी प्रकृति मे पूर्णतः एक दूसरे से पृथक हैं जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 20 मे सूत्रित है।

16. इसलिये, अपील का ज्ञापन, जैसा कि 22 मई 2018 को दाखिल किया गया है, के सम्बन्ध मे मेरा विचार है कि चूंकि सी0पी0सी0 की धारा 9 व आदेश 8 नियम 6क(4) जैसा कि 1977 के संशोधन द्वारा शामिल किया गया, की सामान्य व्याख्या मे वह आदेश 20 मे वर्णित पृथक डिक्री का आकार लेगा जिनमे दो परस्पर विरोधी परन्तु पृथक दावे निर्धारित किये गये तथा उसके सम्बन्ध मे एक ही संयुक्त अपील नहीं संस्थित नहीं की जा सकती है।

17. इस सम्बन्ध मे अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय **ए.आई.आर. 1953 एस.सी. 419, नरहरि एवं अन्य बनाम शंकर एवं अन्य.** का हवाला देते हुये यह अभिकथन किया कि एक ही संयुक्त अपील संस्थित किया जाना न्यायसंगत होगा, विशिष्टतः उन्होने निर्णय के पैरा 5 का सन्दर्भ दिया है, उक्त निर्णय के पैरा 5 के निहितार्थ को विचार मे रखा जाये तो यह उन मामलों मे एक संयुक्त अपील की अनुमति देता है जो कि एक संयुक्त निर्णय द्वारा वाद एवं प्रतिदावा के सम्बन्ध मे निर्णीत किये गये हों:–

> ''5. वादीगण ने उच्च न्यायालय मे संस्थित अपील मे यह सभी प्रतिवादीगण को विपक्षी के रूप मे पक्षकार बनाया और उनकी प्रार्थना मे दोनो अपील शमिल है और उन्होने पूरे मुकदमे के लिये समेकित न्यायालय शुल्क का भुगतान किया है। अब यह पूरी तरह से तय हो चुका है कि जहां विचारण, एक निष्कर्ष और एक ही निर्णय हो वहां दो अपीलें किये जाने की आवश्यकता नहीं है, भले ही दो डिक्री तैयार की गयी हो। जैसा कि न्यायमूर्ति टेक चन्द द्वारा अपने निर्णय मुसम्मात लक्ष्मी बनाम मुसम्मात भूली (1), उपरोक्त वर्णित मे निर्धारित है, निर्धारणीय कारक डिक्री न होकर विवाद्यक मामला है। जैसा कि उन्होने अपने निर्णय मे आगे रखा कहा है, कि विबंध डिक्री के माध्यम से नही बल्कि यह केवल निर्णय के माध्यम से लागू किया जा सकता है। पूर्व न्याय का के सिद्धान्त का प्रश्न तभी लागू होता है जब दो वाद रहे हों। जहां यद्यपि दो मामलो हों और एक ही साथ निर्णय दिये जायें वहा उसे पूर्व वाद मे निर्णय नहीं माना जा सकता है। जहां केवल एक ही वाद हो वहां पूर्व न्याय के सिद्धान्त का

प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है, और वर्तमान वाद मे दोनों ही डिक्रियां एक ही वाद मे हैं तथा एक ही निर्णय पर आधारित हैं, और जो मामला निर्णीत किया गया है वह पूरे वाद से सम्बन्धित है। इस प्रकार पूर्व न्याय के सिद्धान्त के लागू होने का कोई प्रश्न ही नहीं है। वह निर्णय केवल इसलिये प्रभावी नहीं रह सकता कि उसके सम्बन्ध मे भिन्न संख्या की अपील की गयी है अथवा उसकी प्रति किसी अन्य अपील मे संलग्न की गयी है। दोनो ही अपने पदार्थतः एक ही हैं। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय इस अर्थ मे गलत था कि उसने अपीलार्थी को धारा 5 परिसीमा अधिनियम का लाभ नहीं दिया, क्यूंकि वहां इस प्रश्न पर राज्य के उच्च न्यायालय तथा भारत के अन्य उच्च न्यायालयों के निर्णयों मे विरोध था।''

18. अतः, यह कहना कि उपरोक्त निर्णय के पैरा 5 मे यह निर्धारित किया गया है कि एक आम निर्णय के माध्यम से दो भिन्न–भिन्न कार्यवाहियों मे एक विचारण मे एक ही निर्णय है, इस अर्थ मे थोड़ा से भिन्न होगा कि कि पैरा 5 एक ही आम निर्णय को संदर्भित करता है।

19. मेरा दृष्टिकोण यह है कि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के पैरा 5 मे के तथ्य वर्तमान मामले से भिन्न हैं, क्यूंकि इसमे एक निर्णय को ही वाद एवं प्रतिपदावे के सम्बन्ध मे लिये गये निर्णय के रूप मे पढ़ा जायेगा, जो कि एकदूसरे से भिन्न होंगे, जैसा कि वे स्वंतत्र अधिकारा के स्वतंत्र निर्धारण का रूप लेते हैं। इसलिये केवल निर्णय के एक होने के कारण जिसमे दो स्वंतत्र कार्यवाहियों का निर्णय किया गया, इस न्यायालय की राय के अनुसार एक अपील किया जाना पोषणीय नहीं होगा।

20. इसके अतिरिक्त नरहरि (उपरोक्त), के प्रासंगिक पैरा 5 मे निर्णय, जिसे ऊपर व्यक्त किया गया है को वर्तमान मामले मे लागू किये जाने योग्य नहीं माना जा सकता है, क्यूंकि प्रतिदावे को एक भिन्न दावे के रूप मे प्रस्तुत किये जाने सम्बन्धी अवधारणा प्रथम बार 1 फरवरी, 1977 मे शामिल की गयी थी।

21. इस स्तर पर, जब माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने नरहरि एवं अन्य के (उपरोक्त) मामले का निर्णय किया तब आदेश 8 नियम 6–क(4), का नव सम्मिलित प्रावधान विचार का विषय नहीं था कि प्रतिदावे के सम्बन्ध मे किये गये निर्णय के क्या निहितार्थ होंगे, जो कि संशोधन के अनुसार स्वतंत्र वाद मे रूप मे व्यवहृत किया जायेगा। इस कारण यह निर्णय वर्तमान मामले मे सुसंगत नहीं है तथा उसका इस द्वितीय अपील पर कोई प्रभाव

नहीं होगा, क्यूंकि बाद के सम्मिलन के प्रभाव के मामले के इस पहलू पर नरहरि और अन्य के (उपरोक्त) मामले मे विचार नहीं किया गया है।

22. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने वाद मे केरल उच्च न्यायालय की समान पीठ द्वारा एक अन्य निर्णय का उल्लेख किया जिस पर वह बल देना चाहते हैं जो कि **पम्पारा फिलिप बनाम कूरिथोत्तियिल किन्हीमोहम्मद, 2007 (2) सिविल कोर्ट केसेस 9,** है, अपीलार्थीगण ने उक्त निर्णय के पैरा 5 का उल्लेख किया जिसमे यह निर्धारित किया गया है कि उक्त निर्णय का क्या प्रभाव होगा जिसमे वाद एवं प्रतिदावे को एक सामान्य वाद द्वारा ही एकीकृत कार्यवाही से एक ही डिक्री द्वारा निपटाया जाता है वहां अपील, वाद एवं प्रतिदावे के सम्बन्ध मे संयोजन का परिणाम होगी अतः एक की अपील पूर्णतः पोषणीय होगी, केरल उच्च न्यायालय के समन्वय पीठ के निर्णय के पैरा 5 को उद्धृत किया गया हैः–

''5. दूसरी ओर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि एक कार्यवाही मे मूलवाद और प्रतिदावा जहां कि आदेश 8 नियम 6क शामिल है, एक एकीकृत कार्यवाही है इसलिये जब एकीकृत कार्यवाही का निपटारा किया जाता है तो अपील कि विषयवस्तु मूलवाद के साथ प्रतिदावा भी उच्च न्यायालय के समक्ष पूर्णतः पोषणीय होगी। विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क भी प्रस्तुत किया कि आदेश 8 नियम 6क के अन्तर्गत यह योजना है कि एक ही निर्णय के माध्यम से पूरे मामले ही का निस्तारण किया जाये। इसी प्रकार एक ही डिक्री का निर्माण किया जाना है जिसमे कि मूलवाद तथा प्रतिदावा को उल्लिखित किया जायेगा। अब मै इस न्यायालय के एक निर्णय का उल्लेख करूंगा, जो कि ए.जेड. मोहम्मद फारूक बनाम राज्य सरकार, है जिसमे संयोग से यह प्रश्न उठा, और वह वाद की पोषणीयता के सम्बन्ध मे था। परन्तु उस मामले मे प्रतिदावा के विषयवस्तु 10,000/रूपये से अधिक मूल्य का था जिस कारण न्यायालय ने प्रतिदावा के प्रश्न को निर्णीत नहीं किया परन्तु उक्त विवाद्यक के सम्बन्ध मे एक निर्देश प्रस्तुत किया। इस न्यायालय की पूर्ण पीठ ने आदेश 8 नियम 6क से 6छ तक के प्रावधानों के निहितार्थो पर पैरा संख्या 17 मे इस तथ्य को संदर्भित किया कि प्रतिदावे को एक वादपत्र मे रूप मे माना जाना चाहिये और उसे वादपत्र के सम्बन्ध मे लागू होने वाले नियमों से ही शासित होना चाहिये। पैराग्राफ 18 मे न्यायालय ने यह कहा कि उपरोक्त प्रावधानों के सम्बन्ध मे यह मानना सम्भव है कि मुकदमे के विषयवस्तु वाद मे दावा की गयी राशि और प्रतिदावा मे दावा की गयी कुल राशि का योग होगी।'' परन्तु उसे निर्णीत करने के लिये कोई कार्यवाही नहीं किया क्यूंकि प्रतिदावा की धनराशि 10,000/ रूपये से अधिक थी। इसलिये किये जाने वाले अपील की विषयवस्तु न्यायालय शुल्क अधिनियम की धारा 52 के अनुसार वाद पत्र और लिखित कथन मे दावा की गयी कुल धनराशि होगी। यह वह

विषयवस्तु है जो क्षेत्राधिकार निर्धारित करती है। दावा और प्रतिदावा एक की कार्यवाही हैं अथवा स्वतंत्र कार्यवाहियां हैं यह मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा टी.के.वी.एस. विद्यापूर्णाचारी पुत्रगण बनाम एम.आर. कृष्णमाचारी के मामले मे विचार किया गया, जो इस प्रकार हैः आदेश 8 नियम 6क प्रतिदावा को एक ओर एक वाद पत्र तथा दूसरी ओर एक क्रॉस दावे के रूप मे बताता है। फिर अपने सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान मे यह निर्धारित करता है कि न्यायालय वाद मे मूल दावे और प्रतिदावे दोनो पर एक ही निर्णय सुनायेगा। दावे तथा प्रतिदावे का एक ही निर्णय के माध्यम से निस्तारण करने की यह संवेदनाशीलता दोनो को अलग मानने के विचार के विपरीत है। यह केवल इतना ही नहीं है कि संविदा का प्रावधान एक ही झटके मे एक ही निर्णय के माध्यम से दावे और प्रतिदावे के निस्तारण कर एक ही पत्थर से दो पक्षियों के शिकार करने जैसा है। परन्तु नियम 6ग, जहां कि पृथक्करण की आवश्यकता हो, वाद को प्रतिदावे से पृथक करने सम्बन्धी विशेष प्रक्रिया बताता है। यह प्रावधान इस निहितार्थ पर बल देता है कि एक सामान्य नियम के रूप मे एक वाद का दावा और एक प्रतिदावा को एकीकृत कार्यवाही के रूप मे उचित रूप से माना जाना चाहिये। हालांकि, यह नियम एक अपवाद बनाता है, और वह यह है कि यदि वादी यह चाहता है कि दावे के उत्तर मे दायर किये गये प्रतिदावे का निस्तारण न्यायालय द्वारा पृथक से किया जाये तो उसे न्यायालय से इसके लिये प्रार्थना करनी चाहिये तथा यह वाद बिन्दुओं के तय किये जाने से पूर्व ही किया जाना चाहिये। उसके दावे और प्रतिदावे मे संशोधन के लिये उसके आवेदन पर न्यायालय को यह विचार करना होगा कि क्या प्रतिदावे को वाद के भाग के रूप मे निपटाया जाये या प्रतिवादी को एक अलग मुकदमे के लिये भेजा जाना चाहिये। नियम 6ग के यह विशेष प्रावधान वाद के दावे और प्रतिदावे की एकल कार्यवाही की की एकरूपता को दर्शाते हैं।''

23. वास्तव मे वह सिद्धान्त जिसे केरल उच्च न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय मे निपटाया, उसमे आवेदक के अधिवक्ता ने केरल उच्च न्यायालय की **ए.आई.आर. केरल 126 (एफ.बी.), ए.जेड. मोहम्मद फारूक बनाम राज्य सरकार,** की पूर्ण पीठ के निर्णय का हवाला देते हुये तर्क दिया था, जिसमे यह प्रारम्भिक बिन्दु एक उभयनिष्ठ अपील की पोषणीयता के सम्बन्ध मे था, जिसमे दावे और प्रतिदावे की विषय–वस्तु एक ही थी, अतः न्यायालय ने दो भिन्न प्रश्नों का अवधारण नहीं किया बल्कि दो भिन्न बिन्दुओ के सम्बन्ध मे एक सन्दर्भ दिया था, जो मुद्दे मे शामिल थे।

24. उक्त मामले मे, आदेश 8 नियम 6–क के निहितार्थों की साहृश्यता, निर्णय के पैरा 17 मे केरल उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा की गयी टिप्पणियो पर आधारित थी, वास्तव मे, पैरा 17 मे यह वर्णित है कि प्रतिदावे को एक स्वतंत्र वाद के रूप मे माना जाना चाहिये तथा वह उन्हीं नियमों से शासित होगा जो वाद के सम्बन्ध मे लागू होते हैं, और निर्णय के पैरा 18 मे न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि जब वाद की विषय

वस्तु दावे की धनराशि पर्याप्त होगी जो कि धनराशि प्रतिदावे मे दावा की गयी है, न्यायालय प्रतिदावा की धनराशि जो कि 10,000 रूपये से कम थी, को निर्धारित नहीं किया।

25. वास्तव मे, उक्त मुकदमा मे विषय वस्तु जो केरल उच्च न्यायालय के पूर्ण पीठ के समक्ष थी वह धन वसूली के सम्बन्ध मे थी, लेकिन, केरल उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय को इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किये जाये बिना उस पर इस न्यायालय द्वारा बहुत अधिक जांच या निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जा सकता।

26. उक्त निर्णय के पैरा 6 मे जो तर्क दिया गया है यदि उस पर विचार किया जाये तो, केरल उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि वाद एवं प्रतिदावा एकल कार्यवाही के भाग हैं, और जैसा कि उक्त निर्णय के पैरा 6 मे संदर्भित किया गया है कि आदेश 8 नियम 6–ग दावा एवं प्रतिदावा की एकरूपता को एकल कार्यवाही के रूप मे दर्शाता है और जो आवश्यक रूप मे एक सामान्य विषयवस्तु पर एक सामान्य अधिनिर्णय का आकार लेता है। लेकिन, दुर्भाग्य से, निर्णय और निष्कर्ष जो पैरा 5 और 6 मे दर्ज किये गये हैं, ने इस सन्दर्भ मे कोई टिप्पणी नहीं की है कि क्या विषय वस्तु यादि विवादित सम्पत्ति एक ही है, तथा क्या यह एक की निर्णय के माध्यम से निर्णीत की गयी है, तथा आदेश 20 का क्या प्रभाव होगा, क्या इसका प्रभाव एक ही डिक्री के रूप मे होगा या इसके परिणामस्वरूप अलग व स्वतंत्र डिक्री का निर्माण होगा, क्यूंकि विधि की दृष्टि मे दावे और प्रतिदावे को भिन्न दावे के रूप मे माना जाता है।

27. उस स्थिति मे, **पंपारा फिलिप (उपरोक्त),** के मामले मे केरल उच्च न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा व्यक्त किये गये निर्णयाधार से मै पूरे सम्मान के साथ असहमति व्यक्त करता हूं कि मात्र इस बहाने से कि एकल निर्णय किया गया है, आदेश 20 के अन्तर्गत दो अलग–अलग डिक्रियों को चुनौती देने के लिये एक की अपील से उद्देश्य की पूर्ति हो जायेगी, मै केरल उच्च न्यायालय के उस अभिमत से सहमत नहीं हूं कि एक संयुक्त अपील किये जाना सिविल प्रक्रिया संहिता की के आदेश 41 की निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार मान्य होगा।

28. प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने **2015 (4) सुप्रीम, 298, रजनी रानी एवं अन्य बनाम खैराती लाल एवं अन्य,** का सन्दर्भ दिया है, और अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के दलीलों का खण्डन करते हुये उन्होनें उक्त निर्णय के पैरा 12 का सन्दर्भ दिया, जिसे यहां उद्धृत किया गया है:–

''12. पूर्वोक्त प्रावधानों को सीधे तौर पर पढ़ने पर यह काफी स्पष्ट है कि एक मुकदमे मे प्रतिवादी द्वारा किया गया प्रतिदावा विधिक प्रावधान के रूप मे एक क्रॉस सूट की की प्रकृति का है, भले ही मुकदमा खारिज कर दिया गया हो, प्रतिदावा निर्णय के लिये जीवित रहेगा। प्रतिदावे को जीवित रखने के लिये प्रतिवादी को प्रतिदावे के मूल्यानुसार निर्धारित न्यायालय शुल्क अदा करना होता है, वादी को जवाबदावा दाखिल करना होता है तथा यदि वह इसमे चूक करता है तो न्यायालय प्रतिवादी के प्रतिदावे के सम्बन्ध मे वादी के विरूद्ध एक स्वतंत्र वाद की भांति निर्णय पारित कर सकता है। प्रतिदावे की योजना को शामिल करने का उद्देश्य वादों की बहुलता को रोकना है। जहां प्रतिदावे को निरस्त कर जाता है वहां उक्त के सम्बन्ध मे प्रतिवादी का अधिकार समाप्त हो जाता है। नियम 6क (2) के अनुसार न्यायालय उसी वाद मे दावे एवं प्रतिदावे के सम्बन्ध मे एक अन्तिम निर्णय करने के लिये आबद्ध है। जिसका मूल उद्देश्य टुकड़ो मे किये गये अधिनिर्णय से बचना है। वादी, प्रतिदावे को बाहर किये जाने के सम्बन्ध मे प्रार्थनापत्र प्रस्तुत कर सकता है तथा वह ऐसा प्रतिदावे के सम्बन्ध मे वाद बिन्दुओं के अवधारण से पूर्व किसी समय कर सकता है। हमारे सामने ऐसी स्थिति नहीं है।''

29. माननीय उच्चतम न्यायालय ने रजनी (उपरोक्त) के मामले मे प्रतिवादी द्वारा किये गये प्रतिदावे के सम्बन्ध मे आदेश 8 नियम 6क के निहितार्थो पर विचार करते हुये यह विचार व्यक्त किया है कि एक यह एक क्रॉस दावे का रूप लेगा तथा तब भी जबकि दावे को निरस्त कर दिया जाता है तब भी विधि यह प्रावधानित करती है कि प्रतिदावा जीवित रहेगा और वाद की खारिजी से प्रभावित हुये बिना रहेगा, उस स्थिति मे प्रतिदावा एवं वाद दोनो स्वतंत्र प्रकियात्मक एवं निर्णयात्मक प्रास्थिति रखेंगे, जिसके परिणामस्वरूप डिक्री का एक स्वतंत्र सूत्रीकरण होगा, उस स्थिति मे दो भिन्न अपीलें किये जाने की आवश्कता है।

30. इस मामले मे, यह निरन्तर एक बहस का मुद्दा रहा है कि कब एक समग्र डिक्री, जो कि वादपत्र तथा प्रतिदावा के आक्षेपों को तय करती है, में समग्र डिक्री बनाये जाने के कारण चुनौती हेतु दो स्वतंत्र अपीलें होनी चाहिये जहां कि समग्र डिक्री का प्रभाव ऐसा है कि वह दो स्वतंत्र मामलों मे डिक्री की भाति है तथा न्यायालय द्वारा दो स्वतंत्र डिक्रियां प्रदान की गयी हैं, जिसमे से वाद को डिक्री कर दिया गया है तथा प्रतिदावे को खारिज कर दिया गया है।

31. विधि का एक अन्य प्रश्न, जो उत्पन्न होगा वह यह कि क्या जहां समग्र डिक्री जो कि प्रतिवादीगण/अपीलार्थीगण के विरूद्ध निर्णीत की गयी है, के किसी भाग को चुनौती नहीं दी जाती है, जहां प्रतिवादीगण/अपीलार्थीगण द्वारा निचले न्यायालय मे कोई पृथक अपील नहीं दायर की गयी है, क्या जहां निर्णय और डिक्री जो कि प्रतिदावे के सम्बन्ध मे पारित की गयी है तथा जिसकी विधि के अनुसार निर्धारित न्यायालय शुल्क अदा करके स्वतंत्र अपील की गयी है। वाद को डिक्री किये जाने विरूद्ध एक अपील नहीं दायर की जा सकती थी, क्यूंकि वह वादी के पक्ष मे एक स्वतंत्र डिक्री होगी। किसी प्रतिदावे को खारिज करने के विरूद्ध अपील के लिये एक भिन्न अपील होनी चाहिये, क्यूंकि इसमे भिन्न प्रकार के न्यायालय शुल्क का अदा किया जाना शामिल होगा, जो कि विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकार किये अनुतोष के सम्बन्ध मे है जो कि अपील मे प्रतिवादी/अपीलार्थी द्वारा दावा की गयी है। उस परिस्थिति मे, यदि न्यायालय शुल्क के अदा किये जाने के पश्चात् एक समग्र अपील दायर की जाती है तो इस न्यायालय का अभिमत है कि प्रतिवादीगण के विरूद्ध पूर्वन्याय का प्रतिबन्ध लागू हो जायेगा, जहां पर न्यायालय शुल्क अदा किये जाने के पश्चात निर्णय और डिक्री को स्वतंत्र रूप से चुनौती नहीं दी गयी है।

32. इस न्यायालय का यह विचार है कि वर्तमान मामले मे प्रतिदावे को खारिज करते हुये प्रतिवादीगण/अपीलार्थीगण द्वारा अपने प्रतिदावे मे चाहे गये अनुतोष को सम्बन्ध पृथक से अपील की जानी चाहिये, क्यूंकि दो भिन्न डिक्रियों के अलग–अलग सेट हैं जहां पर वाद को डिक्री कर दिया गया है, जबकि प्रतिदावे को निरस्त किया गया है।

33. इस मुद्दे को इस दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है कि आदेश 8 नियम 6क (2) के अनुसार न्यायालय मूल दावे और प्रतिदावे के सम्बन्ध मे उसी वाद मे एक अन्तिम निर्णय पारित करने हेतु सक्षम है, और उस दृष्टिकोण से जहां वाद एक पृथक डिक्री मे माध्यम से प्रतिवादीगण/अपीलार्थी के विरूद्ध उसके प्रतिदावे को निरस्त करते हुये डिक्री किया जाता है, तो उस डिक्री से पीड़ित द्वारा एक पृथक अपील करना होगा। दावे को स्वीकार कर प्रतिदावे को निरस्त किये जाने पर एक समग्र अपील की पोषणीयता के मुद्दे पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **रजनी रानी, 2014 ए.आई.आर. एस.सी.डबलू. 6187.** के वाद मे सिद्धान्त हैं। निर्णय के सुसंगत पैरा 44 रजनी रानी (उपरोक्त) को यहां उद्धृत किया जाता है:–

''44. परिणामतः, यहां ऊपर की गयी विस्तृत चर्चा के दृष्टिगत इस न्यायालय का विचार है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपीलकर्ता/प्रतिवादी की ओर से दाखिल उस समग्र अपील को स्वीकार करने मे त्रुटि की है जिसमे विचारण न्यायालय के निर्णय को चुनौती दी गयी थी, जिसमे उसने वादी के दावे को डिक्री कर दिया था तथा प्रतिवादी

के प्रतिदावे को खारिज कर दिया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित नवीनतम कानून के साथ–साथ ऊपर चर्चा किये कानून मे निहित प्रावधानों के अनुसार पटना उच्च न्यायालय ने एस.ए. संख्या 274 वर्ष 2002 दिनांकित 24.07.2017 मे अपीलकर्ता/प्रतिवादी की ओर से दायर किये गये प्रतिदावे को खारिज करने के सम्बन्ध मे पृथक न्यायालय शुल्क अदा कर पृथक अपील दायर करना चाहिये था तथा एक समग्र अपील, जैसी कि इस वाद मे दायर की गयी, पोषणीय नहीं थी।''

34. एक प्रतिदावा, प्रतिवादी द्वारा उसी कार्यवाही मे एक स्वतंत्र दावा करने के लिये होता है, जो कि प्रतिवादी द्वारा लिखित कथन मे लिया जाता है, तथा एक पृथक वाद का रूप ले लेता है जिससे वह वादी के विरूद्ध एक स्वतंत्र अनुतोष की मांग करता है तथा आदेश 8 नियम 6क (4) की सामान्य भाषा के अनुसार यह एक स्वतंत्र वाद कारण होता है, जो कि वाद की बहुलता रोकने के उद्देश्य से एक स्वतंत्र मामले मे उठाया जाता है, प्रतिवादी को यह स्वतंत्रता है कि वह प्रतिदावा के माध्यम से अनुतोष का दावा कर अपने पक्ष मे डिक्री प्राप्त कर ले, परन्तु चूंकि प्रतिदावा को एक स्वतंत्र वाद के रूप मे माना जाता है, यदि उसे चुनौती नहीं दी जाती है तथा वादी का वाद डिक्री हो जाता है तो सिविल प्रकिया संहिता की धारा 11 के स्पष्टीकरण (1) के अनुसार पूर्व न्याय का सिद्धान्त लागू हो जायेगा।

35. यदि एक वाद मे अंतिम निर्णय हो चुका है जिसमे वह मुद्दा जिसे अपील मे सुना और निर्णीत किया जाना है, तो उससे जुड़ा हुआ वाद जो कि प्रतिदावे के रूप मे है की पुनः अपील नहीं हो सकती है क्यूंकि यह पूर्वन्याय के सिद्धान्त से वर्जित होगा।

36. इस न्यायालय का यह विचार है कि, यदि रामनाथ एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (उपरोक्त) को विचार मे रखा जाता है जो कि 2022 एस.सी.सी. ऑनलाइन सुप्रीम कोर्ट, 788 मे रिपोर्ट है, तो जो प्रधान निर्णयाधार अभिनिर्धारित किया गया है वह यह है कि एक ही निर्णय मे अपीलार्थी जिसने उच्च न्यायालय मे दोनो ही डिक्रियों को चुनौती देते हुये प्रथम अपील दायर किया, यह एक ऐसा वाद था जिसमे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 3 मे यह अभिमत व्यक्त किया कि दो अपीलें होनी चाहिये एवं उस वाद मे अपीलार्थीगण ने एक विविध प्रार्थना प्रस्तुत कर यह अनुमति चाहा था कि उसे समग्र निर्णय के सम्बन्ध मे दो डिक्रियों बाबत एक ही अपील दाखिल करने की अनुमति प्रदान की जाये। अतः रामनाथ प्राइवेट लि0 का उपरोक्त निर्णय इस सन्दर्भ मे था कि जिसमे अपीलार्थी ने समग्र निर्णय के सम्बन्ध मे एक ही अपील दाखिल करने की न्यायालय से अनुमति चाही थी। उक्त निर्णय का पैरा 3 उद्धृत किया जाता हैः–

''3. समग्र निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील संख्या 50 वर्ष 2008 प्रस्तुत किया। अपील दाखिल करने के प्रारम्भिक स्तर पर ही अपीलार्थी ने एक और प्रार्थनापत्र सी.एल.एम.ए. नम्बर 4365 वर्ष 2008(संक्षेप मे सी.एल.एम.ए.) दाखिल कर निर्णय दिनांकित 16.04.2008 जिसमे कि दो डिक्रियां प्रदान की गयी थी, के सम्बन्ध मे एक ही अपील दाखिल करने की अनुमति की प्रार्थना की। उच्च न्यायालय द्वारा आदेश दिनांकित 18.07.2008 द्वारा प्रथम अपील स्वीकार कर ली गयी तथा उसी आदेश द्वारा सी.एल.एम.ए. प्रार्थनापत्र पर आपत्ति एवं प्रतिआपत्ति दाखिल करने हेतु दो सप्ताह का समय प्रदान कर दिया गया, यह भी आदेश किया गया कि प्रार्थनापत्र को समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् प्रस्तुत किया जाये।''

37. अपीलार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत दलीलों के पश्चातृ इस न्यायालय का यह मत है कि निचले न्यायालय द्वारा पारित डिक्री एवं निर्णय को देखने से यह देखा जा सकता है कि अपीलार्थीगण द्वारा अपने प्रतिदावा मे जिस प्रकार का अनुतोष चाहा गया है, यदि उसे वादी द्वारा अपने वाद मे प्रस्तुत डिक्री सहसम्बन्ध मे रूप मे भी पढ़ा जाता है तो, दोनों वाद एक दूसरे से भिन्न थे, तथा विचारोपरान्त न्यायालय द्वारा वादी का वाद डिक्री कर दिया गया तथा प्रतिवादी के प्रतिदावे को इंकार कर दिया गया, आदेश 8 नियम 6क (4) के आलोक मे पृथक अपील किया जाना चाहिये।

38. रजनी रानी (उपरोक्त) के मामले के उपरोक्त सिद्धान्त को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय के पैरा संख्या 9 मे चर्चा की गयी है कि आदेश 8 नियम 6क (4) को आदेश 8 नियम 6क (3) के साथ पढ़ा जाये तो उसके क्या निहितार्थ होंगे तथा अतंतः सर्वोच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उसके प्रावधानो का सामान्य अर्थ के अनुसार जहां प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावा किया जाता है तो वह विधि के निर्देशानुसार क्रॉस वाद के रूप मे होता है तथा मूलवाद चाहे डिक्री कर दिया जाये अथवा निरस्त कर दिया जाये, चूंकि प्रतिदावा विधि की दृष्टि मे जीवित रहता है, उसे विधि के दृष्टि मे एक पृथक वाद के रूप मे व्यवहृत किया जायेगा जो कि तब भी निर्णीत किया जा सकता है जबकि मूलवाद को निरस्त कर दिया गया हो। उक्त निर्णय का पैरा 9, 11, व 13 उद्धृत किया जाता हैः–

''9. विवाद को उचित परिप्रेक्ष्य मे समझने के लिये प्रतिदावे से सम्बन्धित योजना को समझना अनिवार्य है जो सी.पी.सी. (संशोधन) अधिनियम 1976 के 104 द्वारा 01.02. 1977 से लागू किया गया है। आदेश 8 नियम 6क प्रतिवादी द्वारा जवाबदाव से सम्बन्धित है। नियम 6क (2) इस प्रकार निर्धारित करता हैः–

''(2) ऐसे प्रतिदावे का प्रभाव क्रॉस वाद के समान ही होगा जिससे न्यायालय एक ही वाद मे मूल दावे व प्रतिदावे के सम्बन्ध मे अन्तिम निर्णय सुनाने के लिये समर्थ हो जाये।''

11. उक्त नियम का नियम 6क (4) मे यह कहा गया है कि प्रतिदावे को एक वादपत्र के रूप मे माना जायेगा और वह एक वादपत्र के सम्बन्ध मे लागू नियमों द्वारा शासित होगा। नियम 6ख यह प्रावधान करता है कि प्रतिदावा कैसे किया जाना है और नियम 6ग प्रतिदावे के बहिष्करण से सम्बन्धित है। नियम 6घ उस स्थिति से सम्बन्धित है जब मुकदमा बन्द कर दिया जाता है। यह इस प्रकार हैः–

''**6घ. वाद के बन्द कर दिये जाने का प्रभाव–** यदि किसी ऐसे मामले मे जिसमे प्रतिवादी कोई प्रतिदावा उठाता है, वादी का वाद रोक दिया जाता है, बन्द या खारिज कर दिया जाता है, तो ऐसा होने पर भी प्रतिदावे की कार्यवाही की जा सकेगी।''

13. वर्तमान मामले मे प्रतिदावे को अंततः यह राय व्यक्त करते हुये खारिज कर दिया गया है कि यह सी.पी.सी. के आदेश 2 नियम 2 के सिद्धान्तों द्वारा वर्जित है। प्रश्न यह है कि ऐसी राय की अभिव्यक्ति को क्या दर्जा दिया जाये। इस सन्दर्भ मे हम सी.पी.सी. की धारा 2 (2) मे निहित डिक्री शब्द की परिभाषा को सन्दर्भित कर सकते हैंः–

''2(2) ''डिक्री'' से ऐसे न्यायनिर्णयन की प्रारूपिक अभिव्यक्ति अभिप्रेत है जो, जहां तक कि वह उसे अभिव्यक्त करने वाले न्यायालय से सम्बन्धित है, वाद के सभी या किन्ही विवादग्रस्त विषयों के सम्बन्ध मे पक्षकारों के अधिकारों का निश्चयात्मक रूप से अवधारण करता है अेर वह या तो प्रारम्भिक या अन्तिम हो सकेगी। यह समझा जायेगा कि इसके अन्तर्गत वाद का नामंजूर किया जाना और धारा 144 के अन्तर्गत किसी प्रश्न का अवधारण आयेगा, किन्तु इसके अन्तर्गत–

(क) न तो कोई ऐसा न्यायनिर्णयन आयेगा जिसकी अपील, आदेश की अपील की भांति होती है, और

(ख) न व्यतिक्रम के लिये खारिज करने का कोई आदेश आयेगा।

स्पष्टीकरणः– डिक्री तब प्रारम्भिक होती है जब वह वाद के पूर्ण रूप से निपटा दिये जा सकने से पहले और आगे कार्यवाहियां की जानी। वह तब अन्तिम होती है जब कि ऐसा न्यायनिर्णयन वाद को पूर्ण रूप से निपटा देता है। वह भागतः प्रारम्भिक व भागतः अन्तिम हो सकेगी।''

39. अपीलार्थीगण द्वारा जिस निर्णय का अवलम्ब लिया गया है वह पूर्ण रूप से अलग तथ्यों के समूह पर आधारित निर्णय था जिसमे भिन्नता को पैरा 15 एवं 16 मे निपटाया गया है, जो कि पक्षकारों मे से किसी एक से धन वसूली के विचार के सम्बन्ध मे था अतः आदेश 20 नियम 19 के उपनियम (2) के अन्तर्गत किसी मुजरा या प्रतिदावा के सम्बन्ध उन्हीं प्रावधानो के अनुसार होगा जो कि अपील के सम्बन्ध मे होते हैं। वे कार्यवाहियों के सम्बन्ध मे लिये गये निर्णय से प्रभावित हुए बिना अलग–अलग डिक्रियों का रूप लेते हैं, जो कि वाद या प्रतिदावा है क्यूंकि उनका विधिक अस्तित्व और परिणामी निर्णय एक दूसरे से पृथक है क्यूंकि वे पृथक डिक्रियों के सूत्रीकरण के रूप मे परिणत होते हैं।

40. उस स्थिति मे, पैरा 16 मे दिये गये तर्क के आधार पर एक डिक्री जो कि मुजरा या प्रतिदावा के सम्बन्ध मे पारित की जाती है वह सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 108 के अन्तर्गत अपील के कार्यवाहियों के अधीन होगी।

41. अतः, उपरोक्त आधार पर इस न्यायालय का यह मत है कि दो पृथक एवं स्वतंत्र डिक्रियों के सम्बन्ध मे, जो कि एक ही समग्र निर्णय मे पारित किये गये हैं, जहां कि प्रतिदावें को एक स्वतंत्र वाद के रूप मे माना जाता है, एक ही समग्र अपील तर्कसम्मत नहीं होगी।

42. अतः, द्वितीय अपील मे गुण नही है तथा एतद्द्वारा उसे खारिज किया जाता है।

(शरद कुमार शर्मा, जे.)

22.07.2022